आचार्य श्री आर्जवसागर जी रचित साहित्य

आर्जव सूक्तियाँ एवं आर्जवसागर के दोहे

रचयिता

आचार्य श्री आर्जवसागर जी महाराज

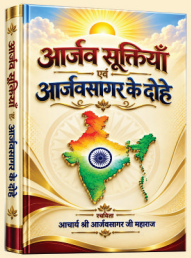

जीवन-संस्कारों की अमूल्य निधि

'आर्जव सूक्तियाँ एवं आर्जवसागर के दोहे'

उक्त कृति आचार्य गुरुदेव श्री आर्जवसागर जी महामुनिराज के गहन आध्यात्मिक चिंतन एवं लोकमंगल की भावना से प्रस्फुटित एक ऐसी कृति है, जिसमें ज्ञान को जीवन से जोड़ने और विचारों को आचरण में उतारने का सुंदर संदेश मिलता है। सूक्तियों एवं दोहों के माध्यम से जीवन के विविध पक्षों पर सरल, सहज और प्रभावशाली ढंग से प्रकाश डाला गया है।

कृति में सत्य, सदाचार, संयम, विनय, करुणा, आत्मानुशासन, विवेक, नैतिकता, संस्कार एवं मानवीय संवेदनाओं जैसे जीवन-मूल्यों को विशेष स्थान दिया गया है। छोटी-छोटी पंक्तियों में व्यक्त गहरे विचार पाठक को ठहरकर सोचने, स्वयं का मूल्यांकन करने और जीवन को श्रेष्ठ दिशा देने के लिए प्रेरित करते हैं। इसकी भाषा सहज है, किंतु भाव अत्यंत गहरे एवं जीवनोपयोगी हैं।

यह कृति विद्यार्थियों, शिक्षकों, अभिभावकों, साहित्य-प्रेमियों, शोधार्थियों एवं सामाजिक अध्येताओं के लिए समान रूप से उपयोगी है। विद्यालयों, महाविद्यालयों, पुस्तकालयों एवं संस्कार केन्द्रों में यह मूल्यपरक शिक्षा और चरित्र-निर्माण की प्रेरक सामग्री बन सकती है। इन सूक्तियों एवं दोहों का उपयोग विभिन्न संस्थानों की दीवारों पर प्रेरक एवं संस्कारपरक संदेशों के रूप में भी किया जा सकता है।

वास्तव में, **'आर्जव सूक्तियाँ एवं आर्जवसागर के दोहे'** केवल पढ़ने योग्य साहित्य नहीं, बल्कि जीवन में उतारने योग्य विचार-संपदा है। यह मन को जाग्रत करती है, विवेक को दिशा देती है और आचरण को संस्कारित करने की प्रेरणा देती है। शब्द छोटे हैं, भाव गहरे हैं और उद्देश्य व्यापक है जो मनुष्य को भीतर से बेहतर बनाकर उसके जीवन को अधिक सार्थक बनाना।

आचार्य श्री आर्जवसागर जी महाराज : जीवन परिचय

पूर्व नाम : पारसचंद जैन

पिता एवं माता : श्री शिखरचंद जैन, श्रीमती मायाबाई जैन

जन्म : 11 सितम्बर 1967, फुटेरा कलां, जिला-दमोह (म.प्र.)

शिक्षा : बी.ए., डिग्री कॉलेज, दमोह (म.प्र.)

ब्रह्मचर्य व्रत : 19 दिसम्बर 1984, अ.क्षे. पनागर, जबलपुर (म.प्र.)

क्षुल्लक दीक्षा : 8 नवम्बर 1985, सि.क्षे. आहारजी, टीकमगढ़ (म.प्र.)

ऐलक दीक्षा : 10 जुलाई 1987, अ.क्षे. थूबोन जी, अशोकनगर (म.प्र.)

मुनि दीक्षा : 31 मार्च 1988, महावीर जयंती, सि.क्षे. सोनागिरि जी, दतिया (म.प्र.)

दीक्षा गुरु : संत शिरोमणि आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज

आचार्य पद : 25 जनवरी 2015, इंदौर (समाधिस्थ पूर्व आचार्य श्री सीमंधरसागर जी महाराज द्वारा)

कृतियाँ एवं रचनाएँ- आचार्य श्री की साहित्य-साधना अत्यंत समृद्ध एवं बहुआयामी है। उनकी कृतियों में आगम, अध्यात्म, काव्य एवं दर्शन का सुंदर समन्वय दिखाई देता है।

आगम ग्रंथ- आगम अनुयोग, जैनागम संस्कार, आध्यात्मिक प्रवचन, पर्युषण पीयूष आदि।

काव्य व शतक- तीर्थोदय काव्य, सदाचार सूक्ति काव्य, मोक्षदायक काव्य, आत्मोद्धार शतक, सन्मार्ग प्रभावना काव्य, तीर्थंकर स्तुति शतक, सम्यक् ध्यान शतक, गुरु-गुण महिमा काव्य, आशीर्वाद शतक, धर्म भावना शतक, ज्ञानवर्धन काव्य आदि।

पद्यानुवाद- पद्यानुवाद मंजरी (गोम्मटेश स्तुति, भक्तामर स्तोत्र, द्रव्यसंग्रह, इष्टोपदेश, समाधितंत्र, तत्त्वसार, प्रश्नोत्तर रत्नमालिका)

अन्य रचनाएँ- आर्जव कविताएं, ओम् योग ध्यान,लोक कल्याण विधान,आर्जव वचनामृत, आर्जव सूक्तियाँ एवं आर्जवसागर के दोहे आदि।

विशेष उपलब्धियाँ- आचार्य श्री को उनके आध्यात्मिक, साहित्यिक एवं सामाजिक योगदान के लिए देश-विदेश में अनेक राष्ट्रीय अंतर्राष्ट्रीय सम्मान प्राप्त हुए हैं। एवं उन्हें D.Phil. एवं D.Litt. जैसी मानद उपाधियों से भी विभूषित किया गया है।

प्रवचन एवं प्रेरणा- आचार्य श्री की ओजस्वी एवं हृदयस्पर्शी वाणी ने देश के अनेक क्षेत्रों में अहिंसा, शाकाहार, नैतिकता, नशामुक्ति, शिक्षा एवं संस्कारों की चेतना जगाई है। वे सरल भाषा में आगम और अध्यात्म के गूढ़ सिद्धांतों को जन-जन तक पहुँचाते हुए संयम, सदाचार एवं आत्मानुशासन की प्रेरणा देते हैं।

आध्यात्मिक साधना, बहुभाषिक विद्वत्ता, साहित्य-सृजन और 20 से अधिक शिष्यों के दीक्षादाता आचार्य श्री 108 आर्जवसागर जी महाराज का जीवन तप, त्याग, ज्ञान और धर्मप्रभावना का उज्ज्वल उदाहरण है। उनका जीवन भारतीय संस्कृति, जैन दर्शन और मानवीय मूल्यों के संरक्षण एवं प्रसार के लिए समर्पित है।

आर्जव सूक्तियाँ एवं आर्जवसागर के दोहे

रचयिता
आचार्य श्री आर्जवसागर जी महाराज

आर्जव सूक्तियाँ एवं आर्जवसागर के दोहे

कृतिकार – आचार्य श्री आर्जवसागर जी महाराज

संपादन – डॉ.श्रेयांश कुमार जैन, बड़ौत
इंजी बहिन ऋषिका जैन, दमोह

संस्करण – प्रथम, 2026

प्रतियां – 1000

पावन-संदर्भ – राष्ट्रीय विद्वत् संगोष्ठी, 2026, बड़ौत (उ.प्र.)

पुण्यार्जक – श्री राजेश-सरिता जैन, रोहित-शेफाली जैन
ब्र.शोभित भैया, सजल-ऋजुता जैन
ऋषिका जैन, लव्यांश जैन, काशवी जैन
आर्जव छाया परिवार, दमोह (म.प्र.)

प्राप्ति-स्थान – आर्जव-तीर्थ एवं जीव-संरक्षण-ट्रस्ट
4, लार्ड्स कैम्पस, लक्ष्मी परिसर, नहर के पास बावड़िया कलाँ, भोपाल-462039
मो. : 7049004653, 9425011357, 9425601161, 9425601832

मुद्रक – पारस प्रिन्टर्स (पवन जैन)
207/4, सांईबाबा काम्पलेक्स, जोन-1, एम.पी. नगर, भोपाल
फोन : 0755-4260034, 9826240876

सम्पादकीय

डॉ.श्रेयांस कुमार जैन
अध्यक्ष-अखिल भारतवर्षीय दि. जैन शास्त्री पिरषद्

काव्य कला को विद् तत्त्व विद्या पारंङ्गत मनीषी आचार्य श्री आर्जवसागर महाराज सन्तशिरोमणि आचार्य श्री विद्यासागर महाराज के सुशिष्य हैं। इन्होंने अध्यात्म-सिद्धान्त सम्बन्धी अनेक ग्रन्थों का प्रणयन तो किया ही है साथ ही इनके द्वारा काव्य साहित्य का सृजन भी भरपूर हुआ है। आचार्य श्री आर्जवसागर प्रज्ञा-प्रतिभा के धनी हैं उन्होंने विविध काव्य संग्रह तैयार किये हैं उन्हीं में सूक्ति और दोहा रूप लिखे काव्य आलौकिक हैं। लोकोत्तर रचनाओं में 'आर्जव सूक्तियाँ एवं आर्जवसागर के दोहे' कृति विद्यार्थियों और सामाजिक अध्ययन करने वालों की अपेक्षा महत्वपूर्ण है। इसमें वर्णित सूक्तियाँ शिक्षाप्रद और और संस्कार प्रदान करने वाली हैं। सूक्तियों में जैनदर्शन के मर्म को उपस्थित किया गया है।

आचार्य श्री प्रथम सूक्ति द्वारा ही जैनधर्म के मूल सिद्धांत का प्रतिपादन करते हैं-

''जिओ और जीने दो सबको।
दया सबक मिलता है हमको॥''

इस सूक्ति के द्वारा जीव मात्र को जीने का अधिकार है। दया धर्म का मूल है उस दया धर्म की शिक्षा भी प्रदान की गई है।

आत्मा का ज्ञान गुण है उसी से आत्मा प्रकाशित रहती है

उसी बात को बताते हुए पूज्यवर ने सूक्ति लिखी है।

दीप तिमिर का नाशक है।
निज में ज्ञान प्रकाशक है॥

जैसे अन्धकार विनाश के लिए दीपक की आवश्यकता होती है उसी प्रकार आत्मा में अज्ञान निवृत्ति के लिए ज्ञान की आवश्यकता है। ''आर्जव सूक्तियाँ और आर्जवसागर के दोहे'' नामक यह छोटी सी कृति बेजोड़ है। इसमें नीति विषयक शिक्षा के साथ मानव मात्र को संस्कार प्रदान किये हैं-

पिता आचरण पुत्र हो वैसा।
शिष्य देखलो गुरु हो जैसा॥

यह सूक्ति बताती है कि पिता के समान पुत्र और गुरु के समान शिष्य लोक में मान्य होता है।

सोच अच्छी रखने के लिए प्रेरणा प्रदान की है-

अच्छा सोचें अच्छा रंग।
बुरा सोचते बुरा हो ढंग॥

यह सूक्ति जीवन को अच्छी सोच के साथ जोड़ती है। आचार्य श्री आर्जवसागर जी का मानना है कि कविताएँ शिक्षा प्रदान करने के लिए सशक्त माध्यम है। यही कारण है कि आचार्य श्री ने ज्ञान, ध्यान, संस्कार, अध्यात्म, क्षमा-करुणा आदि विषयक काव्य रचनाएँ लिखी और आगम-अनुयोग जैसे सिद्धान्त ग्रन्थों का लेखन किया है। आप आगम अध्यात्मक सिद्धान्त के श्रेष्ठ साहित्यकार हैं। साहित्य केवल शब्द संयोजन नहीं होता इसके

माध्यम से राष्ट्र समाज को शिक्षाएँ भी प्रदान की जाती है। आप सरस्वती के राजहंस हैं। आप पर सरस्वती की महती कृपा है उसी के फलस्वरूप आप काव्यों का सृजन करते हैं। आपके काव्य में अलंकार, रस, ध्वनि और माधुर्य प्रखर गुण आदि समन्वित हैं। आप सरस्वती के महान आराधक हैं सरस्वती की कृपा से ही काव्य रचना करते हैं-

सरस्वत्याः प्रसादेन काव्यं कुर्वन्ति मानवाः।
तस्यान्निश्चल भावेन पूज्नीया सरस्वती॥

सरस्वती के आशीर्वाद से काव्य को पूर्ण करते हैं। इसलिए अचल भाव से सरस्वती देवी सदा पूजनीय हैं।

श्री वीतराग अर्हंत केवली भगवान के मुख से उत्पन्न हुई वाणी को आपने आत्मसात किया है। फलस्वरूप आपके प्रवचन प्रभावक होते हैं। सिद्धान्त का प्रतिपादन करने वाले होते हैं। आप मधुर स्वभावी हैं। वात्सल्य करुणा आपके रोम-रोम में समाहित हैं। आपने गुरुदेव आचार्य प्रवर श्री विद्यासागर महाराज से सिद्धान्त की शिक्षा प्राप्त की है उसके आश्रय से ही ग्रन्थों की रचना की और उपदेशों के माध्यम से सम्पूर्ण भारतवर्ष में जिनधर्म की महती प्रभावना कर रहे हैं। विगत 42 वर्ष में अपने चातुर्मास काल में शास्त्रों का लेखन करते हुए समाज को धर्मोपदेश के माध्यम से अभूतपूर्व धर्मप्रभावना कर यश प्राप्त किया है।

आचार्य श्री नीति-निपुण व्यक्तित्व वाले हैं और नीति विषयक रचनाओं के द्वारा लोक में जिनधर्म-प्रभावना के साथ

भारतीय ज्ञान परम्परा का सम्बर्द्धन करने वाले सिद्धहस्त लेखक हैं। भारतीय ज्ञान परम्परा को सम्पुष्ट करने में आपके द्वारा लिखित काव्यों का महत्वपूर्ण योगदान है उन्हीं में यह अनुपम और श्रेष्ठ कृति 'आर्जव सूक्तियाँ और आर्जवसागर के दोहे' आबाल वृद्ध को संस्कार प्रदान करने वाली कृति है। इसे बी.ए., एम.ए के पाठ्यक्रम में स्थान दिया जाना चाहिए। माध्यमिक कक्षाओं के लिये भी उपयोगी है। भारतीय ज्ञान परम्परा का सम्पोषण करने वाली महत्वपूर्ण कृति है। अतः सभी को इसका अध्ययन अवश्य करना चाहिए।

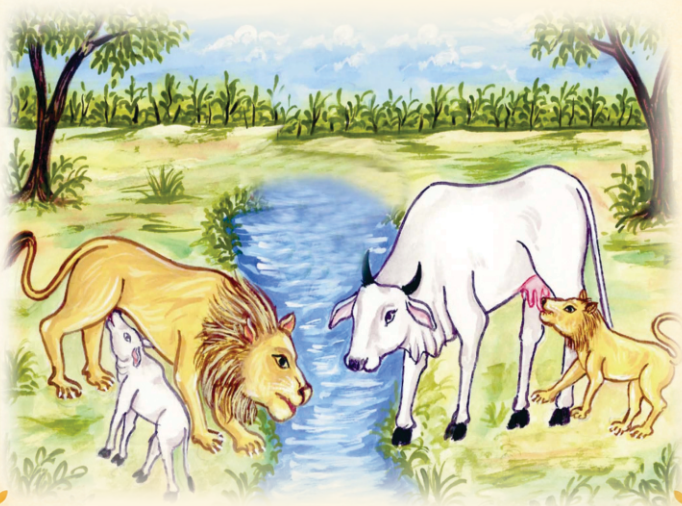

अनुभूति के शब्द....

महापुरुषों का साहित्य किसी व्यक्ति विशेष की धरोहर नहीं होता अपितु वह समस्त मानवता के लिए प्रेरणा, संस्कार और जीवन-दर्शन का अक्षय स्रोत होता है। जब कोई तपस्वी महापुरुष अपने अनुभव, चिंतन और साधना को शब्दों में व्यक्त करता है, तब उसकी वाणी युगों तक समाज को सही दिशा देती रहती है। यह कृति आचार्य भगवन् श्री आर्जवसागर जी महामुनिराज द्वारा 'आर्जव सूक्तियाँ एवं आर्जवसागर के दोहे' ऐसी ही एक अनुपम एवं सर्वोपयोगी कृति है।

यह कृति आचार्यश्री के गहन चिंतन, आध्यात्मिक अनुभूति, शास्त्रीय अध्ययन तथा तप, साधना के सजीव प्रतिफल रूप बगिया के चुनिंदा पुष्प रूप है। इस कृति में वर्णित शिक्षाप्रद उपदेश प्रत्येक जीवन के किसी न किसी सत्य को सहजता से उद्घाटित करता है और मानव जीवन को सदाचार, संयम, करुणा, विनय और देशहितैषी आत्मानुशासन तथा उत्तम विवेक की दिशा में अग्रसर होने की प्रेरणा देता है। सरल, सारगर्भित और प्रभावी हिंदी भाषा में रचित यह कृति पाठक के हृदय में आध्यात्मिक ज्योति प्रज्वलित करेगी।

आज शिक्षा का उद्देश्य केवल बौद्धिक विकास तक सीमित नहीं रह गया है। वर्तमान समय की सबसे बड़ी आवश्यकता ऐसी मूल्यपरक शिक्षा है, जो विद्यार्थियों में नैतिकता, संस्कार, उत्तरदायित्व, आत्मविश्वास, सहिष्णुता और मानवीय

संवेदनाओं का विकास करे। इस दृष्टि से यह कृति विद्यालयों, महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों तथा अन्य शैक्षणिक संस्थानों के लिए अत्यंत उपयोगी सिद्ध हो सकती है। नैतिक शिक्षा, भारतीय संस्कृति, व्यक्तित्व विकास एवं मूल्यपरक अध्ययन के क्षेत्र में यह पुस्तक विद्यार्थियों, शिक्षकों, शोधार्थियों तथा साहित्य-जगत के लिए समान रूप से प्रेरणास्रोत बनेगी।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि आचार्यश्री की यह मौलिक कृति केवल एक पुस्तक बनकर सीमित नहीं रहेगी, बल्कि शिक्षा-जगत में चरित्र निर्माण, संस्कार संवर्धन और जीवन-मूल्यों की स्थापना का प्रभावी माध्यम बनेगी। आने वाली पीढ़ियाँ इससे प्रेरणा ग्रहण कर अपने जीवन को अधिक सार्थक, अनुशासित और मूल्यनिष्ठ बनाने का मार्ग प्राप्त करेंगी। यह कृति भारतीय ज्ञान-परंपरा और जैन साहित्य की अमूल्य निधि के रूप में दीर्घकाल तक समाज का पथ-प्रदर्शन करती रहे.... ऐसी मंगल कामना है।

अंत में आचार्य भगवन् श्री आर्जवसागर जी महामुनिराज के श्रीचरणों में नमोस्तु निवेदित करते हुए मैं इस दिव्य कृति के सफल प्रकाशन पर हार्दिक प्रसन्नता व्यक्त करती हूँ।

— इंजी. बहिन ऋषिका जैन, दमोह

(B.E., M.A., Ph.D.)

(प्रबंध संपादक-भाव विज्ञान पत्रिका)

सूक्तियाँ

सूक्तियाँ

जिओ और, जीने दो सबको।
दया सबक, मिलता है हमको ॥ 1 ॥

•••

दीप, तिमिर का नाशक है।
निज में ज्ञान-प्रकाशक है ॥ 2 ॥

•••

व्यसन छोड़-नर हो अविकार।
मानव जीवन, हो साकार ॥ 3 ॥

•••

ध्यान, विवेक सह, जो सुनता है।
श्रोता वह भवि, गुण गुनता है ॥ 4 ॥

•••

तिथि न निश्चित, अतिथि हैं।
अतिथि पुजते, शुभ तिथि है ॥ 5 ॥

•••

आपद् में सहयोगी बनना।
इह, पर भव का, सौख्य है वरना ॥ 6 ॥

•••

कंठाभूषण-सत्य कहा है।
श्रोताभूषण-शास्त्र रहा है ॥ 7 ॥

•••

मौन साधना, शांति प्रदायी।
झगड़ा झंझट-हर, सुखदायी ॥ 8 ॥

दूध दही हो, थोड़े दही से।
अनेक बदलते, इक धर्मी से ॥ 9 ॥

•••

गुरु-विनय यह, हिय में धार।
विद्या आवे, सौख्य अपार ॥ 10 ॥

•••

गुरु-आदर, सम्मान के साथ।
दुःख आवें न, सब जन साथ ॥ 11 ॥

•••

गुरु-उपदेश, मान आदेश।
जिससे मिटते, सारे क्लेश ॥ 12 ॥

•••

गुरु से करे ईर्ष्या जो।
न गुण गायें, भटके वो ॥ 13 ॥

•••

एक ही काल में, जल-भोजन।
गृहि-गृह में लें, मुनि-जीवन ॥ 14 ॥

•••

गुरु-आसन पर नहीं बैठना।
दे सम्मान, गुरु-पाद बैठना ॥ 15 ॥

•••

आसन, शयन, गुरु के नीचे।
पालें विनय नित, चालें पीछे ॥ 16 ॥

गुरु आशीष में, शक्ति बड़ी है।
श्रद्धा मात्र, सुविधाएँ खड़ी हैं॥ 17॥

•••

गुरु-सेवा में, अमित पुण्य है।
हो प्रभावना भी अक्षुण्य है॥ 18॥

•••

गुरु; कुम्भकार-सम हैं होते।
शिष्य-मृत्तिका को गड़ देते॥ 19॥

•••

मद्य, मांस, मधु, तीन मकार।
छोड़े, आते सौम्य विचार॥ 20॥

•••

शिक्षा उत्तम, ज्ञान अपार।
स्व-देश सेवा, जीवन सार॥ 21॥

•••

रात विश्रांति, दिन पुरुषार्थ।
लक्ष्मी आवे न्याय के साथ॥ 22॥

•••

न्याय-नीति का हो व्यापार।
विश्वास बढ़ेगा अपरम्पार॥ 23॥

•••

धर्म-सभा में सजग रहें।
ज्ञानामृत रसपान करें॥ 24॥

न बोलें, बिन काम कभी।
न झंझट, हों मित्र सभी ॥ 25 ॥

•••

नहीं बात, बिन सोचे हो।
जानें, सज्जन पहुँचे हों ॥ 26 ॥

•••

बहुत बोलना मूल्य नहीं।
तौलें, बोलें मूल्य वहीं ॥ 27 ॥

•••

बिन कारण न हँसते जो।
मर्यादा-सह रहते वो ॥ 28 ॥

•••

नहीं क्रोध क्षण भी आता।
ज्ञानीपन सबको भाता ॥ 29 ॥

•••

सदा सादगी अपनाते।
सन्मार्गी शान्ति पाते ॥ 30 ॥

•••

गुणवानों की गुण की चाह।
पकड़ा देती उत्तम राह ॥ 31 ॥

•••

पर गृह जा न लालच हो।
ना माँगे यह आदत हो ॥ 32 ॥

चलते निरखें राह सही।
जीव बचें यह दया कही ॥ 33 ॥

•••

पढ़ें लिखें नित नेक बनें।
समय व्यर्थ न कभी करें ॥ 34 ॥

•••

जल विद्युत न व्यर्थ करें।
इन्हें बचाने समर्थ रहें ॥ 35 ॥

•••

मौन धारकर भोज करें।
शुद्ध स्वाद व शान्ति वरें ॥ 36 ॥

•••

कम बोलें, सुनना ज्यादा।
यही बड़ों की मर्यादा ॥ 37 ॥

•••

समता रखना सुख-दुःख में।
मीठी वाणी हो मुख में ॥ 38 ॥

•••

ज्यादा चिंता, व्याधि धाम।
निज-चिंतन से पा विश्राम ॥ 39 ॥

•••

न लालच जो करते जान।
स्व-संतोषी, स्वाभिमान ॥ 40 ॥

पर गृह नाच न करती जान।
कुल-नारी की यह पहचान ॥41॥

•••

मीठा होता मोदक भाय।
सफल काम, तब खुशियाँ लाय ॥42॥

•••

सूर्योदय कर्त्तव्य सिखाय।
छोड़ो आलस, धर्म बताय ॥43॥

•••

सदा एकता शक्ति भरती।
रस्से-सम मजबूती करती ॥44॥

•••

धागा टूटे, हो बेकार।
नहीं एकता, होती हार ॥45॥

•••

मात्र नसैनी, रहो नहीं तुम।
चढ़ो, पाओ लक्ष्य सही तुम ॥46॥

•••

दाँत मुड़े ना, रहें कठोर।
जीभ ही रहती, अंतिम छोर ॥47॥

•••

अच्छा सोचें, अच्छा रंग।
बुरा सोचते, बुरा हो ढंग ॥48॥

जिससे निज का, पतन है होता।
वह अच्छा पर, बुरा ही होता ॥49॥

•••

पिता आचरण, पुत्र हो वैसा।
शिष्य देख लो, गुरु हो जैसा ॥50॥

•••

मनोरंजन में समय गमाते।
आयु-अंत में, फिर पछताते ॥51॥

•••

समझे सुबुद्धि, थोड़े बोल।
प्रतिभाशाली हो अनमोल ॥52॥

•••

पुस्तक अपने पास ही रखते।
गन्दी न हो, हाथ न रखते ॥53॥

•••

सुता हो, दारा, निगरानी में।
पर घर, पड़ते हैरानी में ॥54॥

•••

शीशी, शिष्य में लगती डांट।
दवा न बगरे, पकड़े वाट ॥55॥

•••

मिट्टी से बनते भगवान।
मरण होय, तन मिट्टी जान ॥56॥

पतिव्रता सौभाग्य-वती।
सुखी, स्वदार-संतोष पति ॥57॥

•••

सुशील नारी, दो कुल शोभें।
हो बदनामी, द्वय कुल रोवें ॥58॥

•••

आज्ञा जिसको कभी न भावे।
घोड़े को वह पानी दिखावे ॥59॥

•••

जिसे न मिलें मिष्ट अंगूर।
कहे लोमड़ी खट्टे अंगूर ॥60॥

•••

ज्ञानी चलें, अज्ञ रोकते।
हाथी चले श्वान भौंकते ॥61॥

•••

व्यर्थ फेंकते, भोजन, पानी।
न दाना, फिर, भटके मानी ॥62॥

•••

सभ्य-शरीफ, न व्यसन लुभाता।
अश्लीली से, दूर ही भाता ॥63॥

•••

गिरी पड़ी हो, भूली वस्तु।
धूल- समा, पर न लें वस्तु ॥64॥

बड़ों को देख हि, गुणों को गहना।
निम्न देखकर, निम्न न बनना ॥65॥

•••

अज्ञ जनों- सह मजा-लीन हों।
गंभीर वृत्ति को- छोड़, हीन हों ॥66॥

•••

थोड़ा पढ़ना, गुनना ज्यादा।
पाचन की है, यह मर्यादा ॥67॥

•••

हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील।
परिग्रह त्यागे, साधु सुशील ॥68॥

•••

ज्ञान अधूरा, अधिक बताय।
अध-जल-गगरी, छलकत जाए ॥69॥

•••

गाँव का जोगी, ख्यात विदेश में।
मरण भला वह, अन्य प्रदेश में ॥70॥

•••

सार रहित हो बात अगर।
वचन झुण्ड हो, हास्य का घर ॥71॥

•••

बूँद-बूँद वच, मीठे अगर।
भरें सुहित, गागर में सागर ॥72॥

गुण बिन लोक में, मात्र कहावने।
दूर के ढोल, बड़े सुहावने ॥73॥

•••

तनक कर मनक, देखते मौका।
तिल का ताड़ बनाते, धोका ॥74॥

•••

गुरु-आज्ञा से प्रतिभा चमके।
गुरु-गुण गाकर, जीवन महके ॥75॥

•••

देख भाल कर चलना संदेश।
मोक्षमार्ग यह, जिनवर उपदेश ॥76॥

•••

आचरण-बिन निरर्थक ज्ञान।
ऊँची दुकान, फीका पकवान ॥77॥

•••

गुण की सदा हि कीमत हो।
भले ही जन वे सीमित हों ॥78॥

•••

नम्र-वृत्ति जो रखते हैं।
लदे वृक्ष-सम रहते हैं ॥79॥

•••

सुथरा, स्वच्छ स्थल होता।
मन, पवित्र निर्मल होता ॥80॥

नहीं वृक्ष बदला लेता।
पत्थर मारें, फल देता ॥81॥

•••

मेघ देखता, हर्षित मन हो।
कृषक-समा, प्रमुदित जीवन हो ॥82॥

•••

गोद रखे बालक सम मन में।
धारो मातृ कारुण्य स्व-जन में ॥83॥

•••

ऊँचा तरु हो, छाँव नहीं जब।
सुगुण नहीं तो, काम नहीं तब ॥84॥

•••

यन्त्र पराश्रित, बंधन है।
स्वाश्रित तन मन, जीवन है ॥85॥

•••

स्वाश्रित काज, सदा हि शोभे।
स्वाभिमान- विजय हि होवे ॥86॥

•••

यथा जुगाली करती गाय।
तथाहि मुनि करते स्वाध्याय ॥87॥

•••

खाली घर, भूतों का डेरा।
खाली मन, शैतान लुटेरा ॥88॥

बाँस, बाँसुरी बन जाता।
गुरु-गुण शिष्य भी बन भाता ॥ 89 ॥

•••

चक्की-दाना पिस जाता।
कील मिले, रक्षा पाता ॥ 90 ॥

•••

भव-चक्की में, दुःखी सजीव।
धर्म-कील हो, सुखी हो जीव ॥ 91 ॥

•••

भरे बादल, जल वर्षावें।
नेक कवि, कविता गावें ॥ 92 ॥

•••

कोयल, कौआ; बड़ा ही भेद।
भक्ति में सुख, निंदा में खेद ॥ 93 ॥

•••

उपकार वह, सदुपकार ही देता।
यथा मिष्ट जल, श्रीफल देता ॥ 94 ॥

•••

आज्ञा कठोर, गुरु अंतर निर्मल।
यथा नारियल, अंदर कोमल ॥ 95 ॥

•••

ईंट जबाव, पत्थर से देता।
पत्थर-जबाव, तरु फल से देता ॥ 95 ॥

ज्ञान बहुत पर, दोष पलें जहँ।
रहे अंधेरा, दिया तले वह ॥97॥

•••

संगति जैसी, वैसा जीवन।
सीप स्वाति में जल मोती बन ॥98॥

•••

सूर्योदय से पूर्व उठे जो।
बुद्धि शक्ति, क्षीण नहीं हो ॥99॥

•••

घर में कूप, प्रातः की धूप।
वायु पा नभ में, चमकता रूप ॥100॥

•••

शाकाहारी, शुद्ध-विचार।
जीते जग में देव प्रकार ।।101।।

•••

दिन में खाते, भजते नाथ।
रहें निरोगी, सबके साथ ॥102॥

•••

भोजन कर, झट न पढ़ना।
थोड़ा मन, खाली रखना ॥103॥

•••

गर्म-जल हो, सुपाच्य रहा है।
उबले अमृत-वाच्य सखा है ॥104॥

बिना न उबला, भोज्य कभी हो।
फिर बीमारी, कभी नहीं हो ॥ 105 ॥

•••

निज-प्रकृति का विचार करते।
सीमित-खा, बीमार न पड़ते ॥ 106 ॥

•••

शाकाहारी भोजन होता।
शक्ति आये, भक्ति भी देता ॥ 107 ॥

•••

नहीं रोज पकवान सेवते।
बीमारी न कभी देखते ॥ 108 ॥

•••

कम खायें, संतोष रखें जो।
मेहनत कर, न रोष करें वो ॥ 109 ॥

•••

मौसम जैसा, धान्य व फल हो।
सेवे, होवे भोज्य सफल हो ॥ 110 ॥

•••

शोधे बिन न खायें सभी जन।
न पड़ते बीमार कभी जन ॥ 111 ॥

•••

भोज्य पथ्य में नहीं उलंघन।
बीमारी में, शोभे लंघन ॥ 112 ॥

मात्रा-भोजन, मेहनत साथ।
स्वस्थ रहोगे, दिन व रात ॥ 113 ॥

•••

वात, पित्त, कफ कुपित हो हार।
विवेक, संतुलन, स्वास्थ्य सुधार ॥ 114 ॥

•••

फल धान्य दें शक्ति महान।
धार्मिक होते हैं परिणाम ॥ 115 ॥

•••

चबा-चबा जो, अन्न हैं खाते।
कम खा, जीवन में मुस्काते ॥ 116 ॥

•••

प्रातः करते योग सभी।
उन्हें न आता रोग कभी ॥ 117 ॥

•••

अहिंसक आहार, शाकाहार।
देश की भाषा, सौम्य विचार ॥ 118 ॥

•••

गरिष्ठ-भोज्य व ज्यादा हो।
ब्रह्मचर्य में-बाधा हो ॥ 119 ॥

•••

प्रातः टहलें, मिले हवा।
सौ रोगों की, एक दवा ॥ 120 ॥

भूख से ज्यादा, कभी न खाना।
बिना परिश्रम न सो जाना ॥ 121 ॥

•••

दवा प्रयोग में, वैद्य हाथ हो।
रोग मिटे, जब पुण्य साथ हो ॥ 122 ॥

•••

देशी वस्तु में आदर हो।
मन सत्-संतोषी सागर हो ॥ 123 ॥

•••

सुखी रहें सब, शान्त हो प्रजा।
न अन्याय, न मिले ही सजा ॥ 124 ॥

•••

नहीं किसी से, घृणा हि करना।
वैद्य-समा हो, सेवा करना ॥ 125 ॥

•••

नहीं असत्-वच बोलें गुरुवर।
हित-मित-प्रिय ही बोलें गुरुवर ॥ 126 ॥

•••

रहे प्रशंसा या हो निंदा।
न फूलें गुरु, न शर्मिन्दा ॥127 ॥

•••

ज्ञानाराधन प्रतिदिन करते।
ज्ञानाचारी गुरुवर रहते ॥128 ॥

नहीं क्रोध गुरु कभी धारते।
क्षमा-धर्म को नित्य-पालते ॥129 ॥

•••

मृदु-परिणामी, मान नहीं हो।
मार्दव-धर्मी-गुरु गुणी हों ॥ 130 ॥

•••

सरल-हृदय-गुरु, माया-त्यागी।
आर्जव-धर्मी सौम्य-विचारी ॥ 131 ॥

•••

नहीं लोभ गुरु मन में धारें।
शुचिता-पन, गुरु नित्य-सम्हारें ॥ 132 ॥

•••

सज्जन-जन में हित-वच बोलें।
सत्य-कहें गुरु मिश्री घोलें ॥ 133 ॥

•••

गुणाधिकों की सेवा करते।
श्रुत-सेवा में गुरुवर रहते ॥ 134 ॥

•••

बिन गुरु के न कुछ होता है।
जहाँ गुरु हों सब होता है ॥ 135 ॥

•••

गुरु-चर्या में दिखे साधना।
गुरु-दर्शन ही, है आराधना ॥ 136 ॥

गुरु सरल हों, सरल हो जीवन।
कपट नहीं फिर, पावन हो मन ॥ 137 ॥

•••

गुरु में समता सदा ही होती।
दुख को हरती गुरु की ज्योति ॥ 138 ॥

•••

गुरुवर-चित्त की निर्मलता में।
शिष्य बढ़ें गुण-परिमलता में ॥ 139 ॥

•••

गुरु प्रसन्न हों ऐसी सेवा।
बढ़े साधना सुख की मेवा ॥ 140 ॥

•••

गुरु-वाणी पर जब श्रद्धान हो।
सकल कार्य का वह वरदान हो ॥ 141 ॥

•••

गुरु भक्ति में बहुत शक्ति है।
सर्व-क्षेत्र में प्रगति, उन्नति है ॥ 142 ॥

•••

गुरु-गुण गाना भाग्य रहा है।
चरण मिलें सौभाग्य कहा है ॥ 143 ॥

•••

गुरु-दृष्टि में सबका जीवन।
मंगलमय हो पवित्र पावन ॥ 144 ॥

गुरु-आशीष ही खुशियाँ भरता।
सुमार्ग-पा भवि मंजिल चढ़ता ॥ 145 ॥

•••

गुरु-आज्ञा अमृत-सम भाती।
गुरु-वच-पालन, आत्म सुहाती ॥ 146 ॥

•••

गुरु-नाम से सभी काम हैं।
गुरु-नाम से सुबह शाम है ॥ 147 ॥

•••

गुरु की सीख भाग्य से मिलती।
अनुभव-वृद्धि कार्य जु करती ॥ 148 ॥

•••

गुरु से हट न कभी जो करते।
सहज ही ज्ञानीपन को वरते ॥ 149 ॥

•••

गुरु-विनय से पुण्य-अपार।
नैया होती भव से पार ॥ 150 ॥

•••

गुरु से मिलती पहले दीक्षा।
सार्थक होती है तब शिक्षा ॥ 151 ॥

•••

गुरु-आशीष वरदान बड़ा है।
सेवा में फिर लोक खड़ा है ॥ 152 ॥

नजर पड़े जब गुरु की हम पर।
सहज बने सब-काम निरन्तर ॥ 153 ॥

•••

गुरु होते प्रसन्न जहाँ वे।
भक्त शिष्य हों धन्य-धन्य वे ॥ 154 ॥

•••

गुरु-सेवा में पुण्य महा है।
ऐसा अवसर और कहाँ है ॥ 155 ॥

•••

गुरु-उपकार है जग में न्यारा।
गुरु-नाम है जग को प्यारा ॥ 156 ॥

•••

गुरु से बढ़ती महानता है।
गुरु से आती प्रधानता है ॥ 157 ॥

•••

गुरु बढ़ाते कदम हमारे।
गुरु रक्षक हैं परम हमारे ॥ 158 ॥

•••

गुरु को भविष्य; शिष्य का दिखता।
गुरु निभाते नीति रिश्ता ॥ 159 ॥

•••

गुरु कीमती प्राणों से भी।
न तुलना मेहमानों से भी ॥ 160 ॥

सद्गुरु-जीवन जग में अच्छा।
गुरु-पथ-सा न कोई सच्चा ॥ 161 ॥

•••

गुरु-उपकार का कर्ज चुकायें।
गुरु-चर्या में हम ढल जायें ॥ 162 ॥

•••

गुरु-विनय, अविनय है वैसी।
आग पकाये व जलाये जैसी ॥ 163 ॥

•••

गुरु-समर्पित तिर जाते हैं।
गुरु-निंदा से भरमाते हैं ॥ 164 ॥

•••

खुश हों गुरुवर, सब मिलता है।
ना खुश गुरुवर दुःख मिलता है ॥ 165 ॥

•••

गुरु-बिन जीवन है निस्सार।
गुरु से सपने हों साकार ॥ 166 ॥

•••

गुरु-आदर, सम्मान के साथ।
दुःख आवे न, सब-जन साथ ॥ 167 ॥

•••

गुरु-उपदेश, मान आदेश।
जिससे मिटते, सारे क्लेश ॥ 168 ॥

गुरु से करे ईर्ष्या जो।
न गुण गाये, भटके वो ॥ 169 ॥

•••

गुरु पास हों भय मिटता है।
गुरु साथ हों बल मिलता है ॥ 170 ॥

•••

गुरु से ज्ञान-चरित बढ़ता है।
जीवन उन्नत शुभ बनता है ॥ 171 ॥

•••

आशीर्वाद में बड़ा ही दम है।
जीवन में न रहता गम है ॥ 172 ॥

•••

गुरु आशीष जहाँ मिल जाता।
नहीं कष्ट कुछ भवि वह पाता ॥ 173 ॥

•••

दूर दृष्टि है, गुरु की होती।
स्वीकारे; श्रद्धा की ज्योति ॥ 174 ॥

•••

गुरुवर का आशीष रहे जब।
दुःख आते वे कभी नहीं तब ॥ 175 ॥

•••

गुरु के गुण वे शीघ्र ही आते।
दुर्गुण जब वे कभी न भाते ॥ 176 ॥

गुरु आज्ञा में खुशी जहाँ है।
शिष्य कहीं भी, सुखी वहाँ है ॥ 177 ॥

•••

श्रद्धा जितनी बढ़ती जाये।
गुरु आज्ञा भी उतनी भाये ॥ 178 ॥

•••

गुरु तुष्ट हों, कभी न भूलें।
गुरु प्रभावना लख-लख फूलें ॥ 179 ॥

•••

उपवन बढ़े, महकता जाये।
संघ वृद्धि हो गुरु को भाये ॥ 180 ॥

•••

कभी न गुरु को भूल है जाना।
कभी स्वार्थ में फूल न जाना ॥ 181 ॥

•••

गुरु से सच-सच, कहते भविजन।
गुरु-सम सद्गुण गहते सज्जन ॥ 182 ॥

•••

गुरु; शिष्य की चिंता करते।
अपनेपन के भाव उमड़ते ॥ 183 ॥

•••

गुरु डाँटते जहाँ शिष्य को।
अति निकटतम मान शिष्य वो ॥ 184 ॥

दण्ड; गुरुवर देते गर वे।
विशुद्ध बनाते करुणा-धर वे ॥ 185 ॥

•••

शिष्य विशुद्धि गुरु को भाती।
शिष्योन्नति को वह बतलाती ॥ 186 ॥

•••

संतोषी वह शिष्य जहाँ हो।
गुरु खुश होते साथ वहाँ हों ॥ 187 ॥

•••

शिष्य-विनय को लखते गुरुवर।
अंतरंग में हर्षें गुरुवर ॥ 188 ॥

•••

शिष्य-भविष्य, गुरुवर को दिखता।
निकट दूर अन्तर भी दिखता ॥ 189 ॥

•••

गुरु का आसन कौन वरेगा।
गुरु भावों, सम पास चलेगा ॥ 190 ॥

•••

गुरु भाव न दुःखी कदा हों।
ऐसी चर्या शिष्य सदा हो ॥ 191 ॥

•••

गुरु का सदा हि ध्यान रखे जो।
गुरु-सम गुणगण शीघ्र वरे वो ॥ 192 ॥

गुरु-प्रसन्नता, ऊर्जा भरती।
कठिन कार्य को शीघ्र ही करती॥ 193॥

•••

ज्ञान बढ़े समता वह लाता।
सहन-शीलता खूब बढ़ाता॥ 194॥

•••

ज्ञान आचरण में ढलता जब।
ज्ञान का सच्चा फल मिलता तब॥ 195॥

•••

बिना ज्ञान के जीवन खारा।
ज्ञानी; ज्ञान से जग में प्यारा॥ 196॥

•••

चारित शोभा ज्ञान बढ़ाता।
ज्ञान सफल, जब चारित भाता॥ 197॥

•••

ज्ञानी पाता आदर जग में।
नहीं भटकता ज्ञानी मग में॥ 198॥

•••

ज्ञान बढ़ाता व्रत-सुशीलता।
ज्ञान ही लाता सहज, धीरता॥ 199॥

•••

भू-वलय का जहाँ ज्ञान हो।
त्रि लोकज्ञ, ज्योतिवान हो॥ 200॥

'भग' का अर्थ ज्ञान है होता।
ज्ञानवान भगवान कहाता ॥ 201 ॥

•••

ज्ञान बिना न राह है पाता।
मिले ज्ञान मंजिल पा जाता ॥ 202 ॥

दोहे

दुग्ध तपाने से जहाँ, घृत पाते हैं लोग।
शुभ ध्यान व योग से, आत्म तपे शिव भोग ॥ 1 ॥

•••

गुरु-छाया में सब रहें, बढ़ता अनुभव ज्ञान।
गुरुवर ने भरपूर दे,-नेह, हुआ बहुमान ॥ 2 ॥

•••

संस्कार का नित्य ही, पालन हो तब जान।
शुभ-गति पाकर शीघ्र ही, होगा शिव-कल्याण ॥ 3 ॥

•••

सुबह, मध्य व शाम में, नित्य करें शुभ-ध्यान।
योग सुषुम्ना-स्वर चले, परम-शांति हो जान ॥ 4 ॥

•••

जहाँ जीव का घात हो, ऐसा कार्य सहर्ष।
करना हिंसानंद है, जीवन ना आदर्श ॥ 5 ॥

•••

झूठ-वचन जो पाप हैं, उनका जहाँ प्रयोग।
मृषानंद वह ध्यान है, शुद्ध न हो उपयोग ॥ 6 ॥

•••

पर-पदार्थ का हो हरण, छल-कपटी-मन होय।
चौर्यानन्दी-ध्यान है, दुर्गति में गम-जोय ॥ 7 ॥

•••

स्पर्शन, रसना रहीं, काम-इन्द्रियाँ जान।
कामजयी के ऊर्ध्व में, वहे ऊर्जा मान ॥ 8 ॥

सर्व अक्ष-व्यापार को, विराम योगी देत।
धीरे-धीरे श्वास-ले, ध्यान-एक कर लेत ॥ 9 ॥

•••

नहीं दृष्टि हो चंचला, आसन-विजयी पूर्ण।
भौतिक-साधन दूर सब, प्रकृति-साथ सम्पूर्ण ॥ 10 ॥

•••

ध्यान-क्षेत्र एकान्त हो, बाधाओं से दूर।
जंगल, गृह, मंदिर रहे, प्रसन्नता से पूर ॥ 11 ॥

•••

अशन-राजसिक, तामसिक, जिसे छोड़ना श्रेष्ठ।
सात्विक, प्रासुक हो अशन, ध्यान बढ़े, वय जेष्ठ ॥ 12 ॥

•••

नशा, आमिस, कंद तज, निशि में छोड़े भोज।
मर्यादित, शोधित-अशन, स्वस्थ-ध्यान हो रोज ॥ 13 ॥

•••

अर्द्ध-उदर भोजन करे, दुगुना-जल, हो ध्यान।
तिगुना-परिश्रम जो करे, शतायु हो धीमान ॥ 14 ॥

•••

एकाशन उपवास हो, हल्के-पन-सह ध्यान।
ना प्रमाद-निद्रा जगे, मुनि-अनुभूति सुजान ॥ 15 ॥

•••

अभिनन्दन गुण का करें, गुण का कोश विशाल ।
दर्शन, ज्ञान, चरित्र दें, सम्पद् गुरु खुशहाल ॥ 16 ॥

प्रभु-चरण में बैठकर, साता पाते संत ।
हमें दिलावें शीघ्र ही, शुभ-गुण सभी अनन्त ॥ 17 ॥

•••

श्रेय-मार्ग में पूज्य से, होता जग का क्षेम ।
जीव-मात्र पर हो दया, जहाँ जगत् पर प्रेम ॥ 18 ॥

•••

पूजा ना संसार में, कभी रुलाती जान ।
झुकता फल से हो लदा, वृक्ष पाय सम्मान ॥ 19 ॥

•••

पूजा में कुछ दोष हो, विष कणिका-सम रूप ।
सागर-सम बहु पुण्य हो, पूजा विधि अनुरूप ॥ 20 ॥

•••

बाल-भक्त को बोध दो, सुविजित बनूँ कषाय ।
विषय-वासना में कभी, परिणति वह न जाय ॥ 21 ॥

•••

आतम-बल उन्नत बने, धर्म-कर्म में नेक ।
ज्ञानभानु का हो उदय, चिर चैतन्य-विवेक ॥ 22 ॥

•••

भव-क्लेश सब शान्त हों, रक्षा पाये लोक ।
राज-प्रजा व साधु का, कष्ट मिटे भय शोक ॥ 23 ॥

•••

तत्त्व, द्रव्य उपदेश दे, सार्थक किया जहान ।
योग-ध्यान उपयोग से, बनता लोक महान ॥ 24 ॥

मन यह वानर-सम कहा, बड़ी चपलता मान।
ज्ञान, ध्यान में लीन जब, आत्म-शांति सुख जान ॥ 25 ॥

•••

यह शुद्धात्म अजीव से, भिन्न-सिद्ध है जीव।
परम-तत्त्व दर्शन तथा, ज्ञान सहित मम-जीव ॥ 26 ॥

•••

मात-गुरु फिर धर्म गुरु, रहें सभी के पास।
'आर्जव' बन भव पार हों, प्रभु रहें फिर पास ॥ 27 ॥